PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 9, ISSUE 2

भाषा, समाज और संस्कृति का अंतस्संबंध

नलिनी शर्मा

पी. एच. डी. रिसर्च स्कॉलर

भाषा विज्ञान विभाग,

लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

उत्तर प्रदेश, भारत.

जैसा कि सर्वविदित है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज पर आश्रित होने के कारण ही उसे भाषा की रचना की, चाहे वह मौखिक हो या गैर मौखिक। भाषा के विकास में संस्कृति का अध्ययन व अवलोकन का महत्वपूर्ण योगदान होता है। अर्थात् भाषा के अध्ययन में समाज व संस्कृति का महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रस्तुत लेख का प्रमुख उद्देश्य भाषा, समाज व संस्कृति के अन्योन्याश्रित सम्बन्धों का अध्ययन व विश्लेषण करना है तथा यह भी पता लगाना है कि किस प्रकार एक के अभाव में दूसरे की परिकल्पना नहीं की जा सकती है।

प्रमुख शब्दावली –सामाजिक प्राणी, भाषा , समाज, संस्कृति, अन्योन्याश्रित

भाषा शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'भाष धातु' से हुई है जिसका अर्थ 'बोलना या कहना' होता है अर्थात भाषा वह साधन है जिसके द्वारा बोला या व्यक्त किया जा सके। भाषा के कारण ही व्यक्ति सोचने व समझने की क्षमता को विकसित कर सका और स्वयं को अन्य प्राणियों की अपेक्षा श्रेष्ठ घोषित कर सका। कई भाषाविदों ने भाषा को अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है अतः

भाषा को हम किसी एक तरह से परिभाषित नहीं कर सकते हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

अ. एडवर्ड सपीर के अनुसार– ''विचारों भावनाओं व इच्छाओं को स्वेच्छा से उत्पन्न प्रतीकों के माध्यम से सम्प्रेषित करने की विशुद्ध मानवीय और यत्नज पद्यति को भाषा कहते हैं। उच्चारण अवयवों से उत्पन्न माध्यम प्रतीक प्राथमिकता श्रावणित हेाते हैं। (भाषा विज्ञान व हिंदी भाषा विवेचन, सं0 वी0 रा0 जगन्नाथन, पृ0 16)

ब. एलन व पिट कार्डर के अनुसार– भाषा संरचित होती है, अर्थात प्रत्येक भाषिक उक्ति किन्हीं सिद्धांतों के आधार पर संघटित हेाती है। ये सिद्धांत प्रयुक्त शब्दों के रूप, शब्द–क्रम आदि का निश्चय करते हैं। (भाषा विज्ञान व हिंदी भाषा विवेचन, सं0 वी0 रा0 जगन्नाथन, पृ0 17)

स. डा0 भोलानाथ तिवारी के अनुसार– ''भाषा परंपरा से चली आ रही है, व्यक्ति उसका अर्जन परंपरा व समाज से करता है। एक व्यक्ति उसमें परिवर्तन आदि तो कर सकता है, किंतु उसे उत्पन्न नहीं कर सकता। (सांकेतिक या गुप्त आदि भाषाओं की बात यहाँ नहीं की जा रही है)। यदि कोई उसका जनक या जननी है तो समाज और परम्परा। यथार्थतः भाषा केवल मौखिक भाषा को कहना चाहिए। उसका लिखित रूप उसी मौखिक पर आधारित है एवं उसी के पीछे–पीछे चलता है।35 (भाषा की रूपरेखा– डा0 उदय नारायण तिवारी, पृ0सं0 35)।

द. डा0 उदयनारायण तिवारी के अनुसार– '' भाषा मनुष्य के प्रतीकात्मक कार्यों का प्राथमिक एवं बहुविस्तृत रूप है। इसके प्रतीक ध्वनि–अवयवों से उत्पन ध्वनि अथवा ध्वनि समूहों से बने होते हैं एवं विभिन्न वर्गों तथा आकारों में इस प्रकार संजाये हुए रहते हैं कि उनका संयुक्त एवं सुडौल आकार बन जाता है।35 (भाषा शास्त्र की रूपरेखा – डा0 उदय नारायण तिवारी, पृ0सं0 35)।

भाषा के अध्ययन की दृष्टि से मुख्यतः दो रूप, एक भाषा के लिए व दूसरा भाषा संप्रेषण के लिये मुख्यतः माना जाता है।

सस्यूर ने भाषा को लांग (Laungue) और परोल (Parole) में अभिव्यक्त किया है। लांग सभी भाषा– भाषी के मस्तिष्क में विद्यमान रहती है और परोल उसका सामाजिक व्यक्त रूप है जो लांग से भिन्न होता है। किंतु भाषा में अध्ययन की दृष्टि से **सस्यूर** लांग को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। **नाम चाम्स्की** भी भाषा के दो आयाम भाषिक क्षमता (Lang. Competence) और भाषिक व्यवहार (Lang. Performance) के रूप में अभिव्यक्त्त किया है। भाषिक क्षमता को वह जन्म से ही मानते हैं कि बच्चे में भाषा सीखने की क्षमता जन्म से ही विद्यमान रहती है किन्तु वह जिस समाज से रहता है उसी भाषा को सीखता है। यदि कोई भारतीय बच्चा, चीन में रहेगा या उसकी परवरिश चीन में होगी तो वह चाइनीज भाषा ही बोलेगा ना कि भारतीय भाषा, क्योंकि 'भाषिक व्यवहार' सामाजिक है और वह भाषा का अधिग्रहण समाज और संस्कृति से ही करता है। यदि कोई व्यक्ति 'भाषिक व्यवहार' एक निश्चित स्थान व समय पर नहीं कर पा रहा है तो इसका यह मतलब नहीं होता है कि उसमें भाषिक क्षमता का अभाव है। यह किसी भी कारणवश उस समय व परिस्थिति में 'भाषिक व्यवहार' नहीं कर पा रहा है।

भाषा समाज व संस्कृति के अंतस्सम्बन्ध को मुख्यतः दो रूपों में समझा जा सकता है। पहला 'भाषा का समाजशास्त्र' और दूसरा 'समाजोन्मुख भाषा'। भाषा का समाज शास्त्र में मुख्यतः हम उनका अध्ययन व विश्लेषण करते हैं जिनका सम्बन्ध समाज और उसके संस्थान में रहता है। भाषा का आधुनिकीकरण व मानकीकरण व किसी भाषा का राजभाषा बनाया जाये या नहीं, इन सभी का अध्ययन व विश्लेषण भाषा का समाजशास्त्र के अंतर्गत होता है।

'समाजोन्मुख भाषा' में भाषा के सामाजिक प्रतीक मानकर उसका अध्ययन होता है। यहाँ भाषा भेद और भाषा विकल्पन का आधार सामाजिक प्रकार्य होता

है। क्योंकि भाषा एक सामाजिक वस्तु है। भाषा व्यवहार के द्वारा ही यह भाषा का वास्तविक प्रकृति का भी उद्घाटन करता है।

भाषाविद **लेबांव** भी भाषा और समाज को एक दूसरे से भिन्न नहीं मानता है उनके अनुसार ये दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं और भाषा की मूल प्रकृति में ही समाज व संस्कृति अंतर्निहित रहते हैं।

रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के अनुसार, ''भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का मात्र साधन अथवा सामाजिक अर्थ के संप्रेषण का मात्र उपकरण ही नही है। वह अंशतः स्वयं में संप्रेषण कथ्य भी होती है। संप्रेष्य कथ्य के रूप में वह अगर अपने प्रयोक्ताओं की सामाजिक अस्मिता की ओर संकेत दे सकती है तो एक सामाजिक वर्ग के लिए 'अलगाव' का कारण भी बन सकती है। भाषा को लेकर व्यक्ति जब लगाव की वृत्ति से प्रेरित होता है तब 'भाषा अनुरक्षण' (Lang. Maintanance) की प्रवृत्ति की ओर उन्मुख होता है। इसके विपरीत 'विलगाव' या अन्य सामाजिक दबाव से प्रेरित होकर व्यक्ति भाषा परिवृत्ति (Lang. Shift) की ओर अग्रसित होता है। (हिंदी भाषा का समाजशास्त्र, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव)।

एक समाज में बोली जाने वाली भाषा दूसरे समाज में बोली जाने वाली भाषा से भिन्न होती है इसके कई कारण होते हैं, जिसमें समाज, संस्कृति, शिक्षा, लिंग, भेद, आयु, आदि कई कारण होते हैं। भारत जैसे राष्ट्र में जहाँ लगभग 500 से अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं वहाँ पर इसका अंदाजा लगाया जा सकता है कि समाज व संस्कृति में भी अत्यधिक भिन्नता पाई जाती है। जिस प्रकार हर कोस में पानी का स्वाद बदल जाता है उसी प्रकार यहाँ पर भाषा में भी भिन्नता पाई जाती है। दिल्ली के व्यक्ति द्वारा बोली गई हिन्दी भाषा व उत्तर प्रदेश या बिहार, हरियाणा, झारखंड आदि के व्यक्ति द्वारा बोली गई भाषा की भिन्नता श्रोता आसानी से समझ सकता है और इसी के कारण भाषा पर क्षेत्रीयता का असर पड़ता है। एक श्रोता भाषा के आधार पर यह बता देगा कि कौन सा व्यक्ति किस क्षेत्र विशेष से ताल्लुक रखता है। यही नहीं वरन भाषायी संरचना, सांस्कृतिक व सामाजिक संरचना को भी निर्धारित करती है क्योंकि व्यक्ति विशेष

की भाषा के द्वारा ही उसके समाज व संस्कृति का पता चलता है। एक व्यक्ति तू, तुम, और आप में से किसका चयन करता है यह उसकी सामाजिक संरचना को व्यक्त करेगा।

सामाजिक व सांस्कृतिक व्यवहार के रूप में भाषा का अध्ययन व विश्लेषण करना न केवल सामाजिक संरचना की समझ के लिए महत्वपूर्ण है वरन यह भाषा की समझ के लिए भी महत्वपूर्ण है।

व्यक्ति की अस्मिता को समझने के लिए उसकी भाषा को समझना अति आवश्यक है, क्योंकि भाषा के माध्यम से ही व्यक्ति के समाज, संस्कृति व उसकी अस्मिता की पहचान होती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज का अभिन्न अंग होने के कारण उसने भाषा की रचना की। भाषा के कारण ही मनुष्य, मनुष्य है। जैसा कि हम जानते हैं कि मनुष्य के पूर्वज वानर अर्थात बंदर थे, किंतु मनुष्य ने अपने बौद्धिक कौशल के कारण अपने आप को पशुओं की श्रेणी से श्रेष्ठ बना दिया और उसकी यह श्रेष्ठता भाषा और चिंतन के कारण ही संभव हो पाई अन्यथा वह आज भी पशु के समान ही होता।

अब प्रश्न यह उठता है कि भाषा पहले आयी या चिंतन ? भाषा की शोधार्थिनी होने के कारण मेरा मानना है कि भाषा का प्रादुर्भाव चिंतन से पहले हुआ, क्योंकि कोई भी मनुष्य भाषा के अभाव में चिंतन ही नहीं कर सकता, और चिंतन करने के लिए भाषा की आवश्यकता पड़ती है। यद्यपि भाषा का मौखिक रूप बाद में आता है, पहले तो भाषा का मस्तिष्क में चिंतन होता है उसके पश्चात हम मौखिक अथवा मौखिक रूप में अपने आपको अभिव्यक्त करते हैं। जब बच्चा जन्म लेता है तो वह 'तबूला राशा' (Tabula Rasa) अर्थात खाली दिमाग होता है किन्तु जैसे ही वह बड़ा होने लगता है उसे समाज, संस्कृति व भाषा के माध्यम से ही ज्ञान मीमांसा व तत्व मीमांसा का बोध होता है। वाह्य जगत अथवा समाज के द्वारा ही उसे सबसे पहले यह बोध होता है कि कौन उसकी माता, पिता, भाई व बहन है। क्योंकि वह तो एक खाली दिमाग का शिशु मात्र है, उसे अपना नाम ही नहीं, उसे तो यह तक नहीं पता होता है कि वह

शिशु स्त्रीलिंग है या पुल्लिंग है। भाषा के माध्यम से ही उसमें ज्ञान की उत्पत्ति अथवा चिंतन कराया जाता है और इसी को हम ज्ञान मीमांसा के रूप में जानते हैं।

संस्कृति का अर्थ कर्मशीलता या कर्मशील से होता है। **डा0 विनोद शाही** के अनुसार, ''संस्कृति की व्याख्या करने के लिहाज से हमारा दौर अब तक की सबसे बड़ी नाकामयाबी का दौर है। वैज्ञानिक व्याख्याएं संस्कृति को मापने में नाकामयाब रही हैं तो उत्तर वैज्ञानिक व्याख्याएं उसे विखण्डित करने में मिली कामयाबी की वजह से, पैमायश की हदें ही खो देने की वजह से नाकामयाब हैं।'' इतिहास बोध– (संस्कृतिः कल आज और कल – लाल बहादुर वर्मा, पृ0सं0 16)

संस्कृति अनुकूल परिस्थितियों में ही पुष्पित व पल्लवित होती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में तो यह मुरझा जाती है अथवा नष्ट हो जाती है। संस्कृति में एक प्रकार की गतिशीलता होती है। क्लीफोर्ड ग्रीच्ड (Clifford Geertz) के अनुसार (The Interpretation of Culture) जिसे हम संस्कृति का यथार्थ कहते हैं वह वास्तव में संस्कृति विशेष के बारे में स्थानीय धारणाओं की हमारी अपनी व्याख्या है। इतिहास बोध– (संस्कृतिः कल आज और कल – लाल बहादुर वर्मा, पृ0सं0 16) इसमें प्रत्येक व्यक्ति का अपना महत्वपूर्ण योगदान होता है चाहे वह भाषा के माध्यम से हो अथवा समाज व संस्कृति के माध्यम से।

राहुल सांकृत्यायन के अनुसार–

''संस्कृति वस्तुतः देश जाति से संबंधित है, धर्म के साथ उसका नाता जोड़ना गौड़ रीति से ही हो सकता है। जाति के साथ संस्कृति या संस्कार का संबंध वैसे ही है जैसे नये घड़े में घी या तेल भर के कुछ दिन रखकर उसे निकाल देने पर घड़े के भीतर प्रविष्ट तेल का अंश बचा रहता है। एक पीढ़ी आती है, वह अपने आचार–विचार, रुचि–अरुचि, कला–संगीत, भोजन–छाजन या किसी और दूसरी आध्यात्मिक धारणा के बारे में कुछ स्नेह की मात्रा अगली पीढ़ी के लिए छोड़ जाती है। एक पीढ़ी के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी और

आगे बहुत सी पीढ़ियाँ आती जाती रहती हैं और सभी अपना प्रभाव या संस्कार अपने से अलग पीढ़ी पर छोड़ती जाती हैं। यही प्रभाव (संस्कार) संस्कृति है। किंतु संस्कृति भी सर्वथा अचल नहीं होती। दुनिया में कोई चीज स्थिर और अचल नहीं है, फिर संस्कृति ही कैसे उसका अपवाद बन सकती है ? जिस प्रकार व्यक्ति के मानस पटल पर पुराने अनुभव स्मृति के रूप में अवशिष्ट रहते हैं, और समय पाने पर स्मृतियाँ धूमिल हो जाती हैं, वैसे ही पूर्वजों से चले आये हमारे संस्कार (संस्कृति) धूमिल होते हैं, रूपांतरित होते हैं, तो भी प्रति पीढ़ी के संस्कारों का प्रवाह कुछ अपनी विशेषता या व्यक्तित्व रखता है। काशी तक पहुँचने में गंगा का वही जल नहीं रह जाता, जो गंगोत्री में देखा जाता है; तो भी गंगा का अपना एक व्यक्तित्व है।'' (वागार्थ, मार्च 2008, मासिक अंक 152 के आवरण पृष्ठ के 'देश' शीर्षक से, संपादक– एकांत श्रीवास्तव, कुसुम खेमानी)।

सपीर ने भाषा संस्कृति को एक दूसरे का पूरक माना है, अर्थात एक के अभाव में दूसरे को समझना असंभव है। **वोर्फ** के अनुसार भाषा केवल व्याकरण विचारों का स्वर देने या अभिव्यक्त करने के साधन ही नहीं हैं, अपितु यह विचारें को आकार देनेवाला दिशा–निर्देशक है। इस प्रकार **वोर्फ** भाषा, समाज व संस्कृति को निर्धारक के रूप में मानते हैं। इसी प्रकार **डेल हाइम्स** भी भाषा और संस्कृति के सम्बन्ध को बहुत ही महत्वपूर्ण मानते हैं। इन्होंने ''भाषा को स्थितिपरक (सिचुएशनल) तो माना पर यह जो जोड़ा कि भाषा के साथ कोई परंपरागत घटक आबद्ध होते हैं, इसीलिए भाषा में कई उक्तियाँ (utterences) ऐसी होती है जो सांस्कृतिक संबंध में ही अपना अर्थ दे पाती हैं। भिन्न भाषाओं का सांस्कृतिक संदर्भ भी भिन्न होता है। **हाइम्स** ने यहां तक कहा कि भाषा अधिगम का तात्पर्य प्रयोग करना सीखना तक ही सीमित नहीं होता है, प्रयोग करके संस्कृति को जानना भी होता है। (भाषा का संसार, दिलीप सिंह, पृ0 42)।

हिन्दी भाषा–भाषी क्षेत्र में जहाँ सम्बन्धों के लिए अलग–अलग शब्दावलियों का प्रयोग किया जाता है जैसे– चाचा–चाची, दादा–दादी, नाना–नानी, सास–ससुर, भईया–भाभी, साला–साली आदि किंतु अंग्रेजी में इनके लिए एक ही शब्दावली का प्रयोग किया जाता है अंकल (Uncle) और आंटी (Aunty)। इसके

द्वारा हमें भारतीय समाज व संस्कृति का अंदाजा लगाया जा सकता है कि सामाजिक बंधन, एकरूपता व संगठन को परिलक्षित करता है इसके विपरीत विदेश में अंकल व आंटी, सामाजिक ताने–बाने के कमजोर स्वरूप को व्यक्त करता है।

संबोधन की दृष्टि से भी हिंदी भाषा–भाषी क्षेत्र में एक दूसरे से मिलते समय लोग सम्बोधित करते हैं जैसे– राधे–राधे, जय सियाराम, राम–राम, जय राम जी की, जय जिनेन्द्र, अथवा नमस्ते, नमस्कार, प्रणाम आदि। इस प्रकार की विविधता केवल और केवल हमारे देश में ही देखने को मिलती है।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत लेख के माध्यम से यह आसानी से समझा जा सकता है कि किस प्रकार भाषा–समाज और संस्कृति एक दूसरे की पूरक हैं और एक के अभाव में दूसरे की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- रस्तोगी कविता – भाषा विमर्श
- डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया – भाषा– भूगोल उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ
- डॉ. भोलानाथ तिवारी – हिन्दी भाषा की सामाजिक संरचना, साहित्य सहकार प्रकाशन दिल्ली
- विमलेश कान्ति वर्मा मालती – भाषा साहित्य और संस्कृति, ओरियंट ब्लैक स्वान प्राइवेट लिमिटेड (दिल्ली)
- रामविलास शर्मा – भाषा और समाज राजकमल प्रकाशन लिमिटेड नई दिल्ली
- मुकेश अग्रवाल – भाषा लोक स्वराज प्रकाशन दिल्ली
- प्रो. कविता रस्तोगी – भाषा विज्ञान का परिचय अविराम प्रकाशन
- ग्रियर्सन जार्ज, 1959 , भारत का भाषा सर्वेक्षण (अनु) उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
- डॉ. उदय नारायण तिवारी – भाषा शास्त्र की रूपरेखा, पृष्ठ संख्या 35
- नॉम चाम्स्की – ऑन लैंग्वेज

- सस्यूर – कोर्स इन जनरल लिंग्विस्टिक्स
- रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव – हिन्दी भाषा का समाजशास्त्र
- डॉ. शिवाजी राम किसन सांगोले – भाषा, समाज और समकालीन साहित्य
- ओम प्रकाश केजरीवाल (सं.) : विदेश में हिंदी : स्थिति और संभावनाएं, प्रकाशक : नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं पुस्तकालय, तीनमूर्ति भवन, नई दिल्ली, 2004, पृ0 सं0 338।
- सुरेश ऋतुपर्ण : कमला प्रसाद मिश्र की काव्य साधना, गौरव प्रकाशन, दिल्ली, 1986, पृ0सं0 168।